



प्रकाशनार्थ अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

माध्यस्थम् अपील सं. 57/2013

(के एम.जे.सी.सं.89/2012 में विद्वान जिला न्यायाधीश, बिलासपुर द्वारा पारित 11-03-2013 दिनांकित आदेश से उद्धृत)

आदेश सुरक्षित रखा गया : 30-10-2017आदेश पारित किया गया : 21-11-2017

मेसर्स लैंको अमरकंटक पावर लिमिटेड, कंपनी अधिनियम, 1956 के तहत निगमित एक मर्यादित कम्पनी है जिसका पंजीकृत कार्यालय प्लॉट सं. 130, रोड सं. 2, बंजारा हिल्स, हैदराबाद में है।

----- अपीलार्थी

विरुद्ध

साउथ ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड, द्वारा- अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, एस.ई.सी.एल., सीपत रोड, बिलासपुर (छ.ग.)

----- उत्तरवादी

अपीलार्थी की ओर से : वरिष्ठ अधिवक्ता श्री गोपाल जैन सह श्री आशीष श्रीवास्तव, सुश्री चिन्मयी चंद्रा, श्री विनीत तयाल, श्री अनिमेष वर्मा और श्री सौम्या राय, अधिवक्ता।

उत्तरवादी की ओर से : श्री किशोर भादुड़ी एवं श्री अनुमेह श्रीवास्तव, अधिवक्ता।

माननीय न्यायमूर्ति श्री संजय के. अग्रवालसी. ए. वी आदेश

1. माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 37(1) के तहत इस न्यायालय के अपीली अधिकारिता का आह्वान करते हुए (संक्षिप्तता के लिए जिसे इसके बाद 'मा.सु. अधिनियम' कहा जाएगा), अपीलकर्ता-लैंको अमरकंटक पावर लिमिटेड (एल. ए. पी. एल.), जो भारतीय कंपनी अधिनियम के प्रावधानों के तहत पंजीकृत एक कंपनी है, ने यह माध्यस्थम् अपील दायर की है, जिसमें जिला



न्यायाधीश, बिलासपुर द्वारा मा.सु. अधिनियम की धारा 34 (2) के तहत आवेदन को प्रत्यर्थी- साउथ ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड (एसईसीएल) के पक्ष में स्वीकार करने वाले आक्षेपित आदेश की वैधता, मान्यता या अन्यथा पर प्रश्न उठाया गया है, जिसके तहत विद्वान जिला न्यायाधीश ने माध्यस्थम् न्यायाधिकरण द्वारा बहुमत से पारित माध्यस्थम् पंचाट को अपास्त किया है।

2. आक्षेपित आदेश की शुद्धता का न्याय करने के लिए सभी सामग्रियों के आवश्यक तथ्य निम्नानुसार हैं:-

2.1) अपीलार्थी एल. ए. पी. एल. ने कोरबा में 300 मेगावाट की क्षमता वाला एक ताप विद्युत संयंत्र (इकाई 2) स्थापित किया है और इस उद्देश्य के लिए उसने वन और पर्यावरण मंजूरी आदि जैसी आवश्यक वैधानिक मंजूरी प्राप्त कर ली है और भारत शासकीय के कोयला मंत्रालय ने ज्ञापन द्वारा अपीलार्थी को उक्त तिथि से एक वर्ष के भीतर प्रतिवादी (एस. ई. सी. एल.) के साथ ईंधन आपूर्ति करार (एफ. एस. ए.) करने का निर्देश दिया है। तदनुसार, अपीलार्थी एल. ए. एन. सी. ओ. ने 31-12-2015 पर प्रत्यर्थी एस. ई. सी. एल. के साथ एफ. एस. ए. में प्रवेश किया।

2.2) पक्षकारों द्वारा इस प्रकार हस्ताक्षरित एफ. एस. ए. में अन्य कण्डिकाओं के साथ-साथ "शर्तें पूर्ववर्ती" शीर्षक के तहत एक कण्डिका शामिल है, एफ. एस. ए. की उक्त शर्तों के तहत कण्डिका 2.3 और अन्य कण्डिकाओं की निरंतरता में, क्रेता (एल. ए. पी. एल.) को एक ई. एम. डी./प्रतिबद्धता अग्रिम (कण्डिका 2.6) जमा करने की आवश्यकता थी और करार की तिथि अर्थात् करार पर हस्ताक्षर किए जाने की तिथि से एक वर्ष के भीतर वित्तीय समापन प्राप्त करने की भी आवश्यकता थी। अपीलार्थी पर यह भी बाध्यकारी था कि वह सात दिनों की अवधि के भीतर प्रत्यर्थी एस. ई. सी. एल. को सूचित करे, जिस दिन वह वित्तीय समापन प्राप्त करता है (कण्डिका 2.4)। इसे प्रत्यर्थी (एस. ई. सी. एल.) हेतु अनिवार्य बना दिया गया था कि यदि अपीलार्थी करार में निर्दिष्ट अवधि के भीतर वित्तीय समापन प्राप्त करने में विफल रहता है तो प्रत्यर्थी (एस. ई. सी. एल.) अग्रिम धन/प्रतिबद्धता अग्रिम के विरुद्ध बैंक गारंटी का आह्वान करना।

2.3) यह अपीलार्थी का प्रकरण है कि उसने पहले ही 9-9-2005 और 20-9-2005 के बीच करार के तहत आवश्यकता के अनुसार वित्तीय समापन प्राप्त कर लिया था, जिसके बारे में उसने प्रत्यर्थी एसईसीएल को 4-2-2006 पर सूचित किया था, जबकि प्रत्यर्थी एसईसीएल ने पाया और कहा कि अपीलार्थी एलएपीएल ने एफएसए की शर्तों के अनुसार वित्तीय समापन हासिल नहीं किया, जिसमें अपीलार्थी एलएपीएल द्वारा दी गई बैंक गारंटी को उसमें बताए गए



आधारों पर 29-2-2008 पर एफएसए को समाप्त करने के पश्चात लागू और भुनाया गया था।

2.4) संविदा की समाप्ति और इसके परिणामस्वरूप बैंक गारंटी के आह्वान के विवाद के कारण अपीलार्थी द्वारा इस न्यायालय के समक्ष रिट याचिका सं. 1514/2008 शीर्षक से रिट याचिका दायर की गई। एफ. एस. ए. में माध्यस्थम् कण्डिका पर विचार करते हुए, पक्षों को विवाद का माध्यस्थम् करने का निर्देश दिया गया था, तत्पश्चात पक्षों ने माध्यस्थम् अधिकरण का गठन करके माध्यस्थम् विवाद को हल करने के लिए तीन मध्यस्थ (एक पीठासीन मध्यस्थ और दो अन्य मध्यस्थ) नियुक्त किए।

2.5) इस प्रकार गठित माध्यस्थम् अधिकरण ने अभिलेख पर मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य की सराहना करने के पश्चात बहुमत (2:1) से, अपीलकर्ता एल. ए. पी. एल. के पक्ष में और प्रत्यर्थी एस. ई. सी. एल. के विरुद्ध इस प्रभाव से एक निर्णय पारित किया कि बैंक गारंटी की कथित समाप्ति और परिणामी आह्वान अवैध तथा अमान्य था और प्रत्यर्थी एस. ई. सी. एल. को ब्याज के साथ डिजिटल राशि वापस करने का निर्देश दिया।

2.6) पंचाट (अधिनिर्णय) से व्यथित और असंतुष्ट होकर, प्रत्यर्थी एस. ई. सी. एल. ने जिला न्यायाधीश, बिलासपुर के समक्ष मा.सु. अधिनियम की धारा 34 (2) के तहत एक आवेदन दायर करके बहुमत से पारित किए गए पंचाट (अधिनिर्णय) पर प्रश्न उठाया। विद्वान जिला न्यायाधीश ने अपने आक्षेपित आदेश द्वारा उस आवेदन को स्वीकार कर लिया और बहुमत से निर्णय को अपास्त कर दिया, जिससे अपीलार्थी एल. ए. पी. एल. द्वारा इस न्यायालय के समक्ष दायर अपील के ज्ञापन में उल्लिखित आधारों पर विद्वान जिला न्यायाधीश के आदेश पर प्रश्न उठाते हुए इस माध्यस्थम् अपील को दायर किया गया।

3. अपीलार्थी एल. ए. पी. एल. की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री गोपाल जैन, आक्षेपित आदेश का खण्डन करते हुए दृढ़ता से निम्नानुसार तर्क करते हैं :-

1. विद्वान जिला न्यायाधीश ने मा. सु. अधिनियम की धारा 34 (2) के विशेष आधार/ उपकण्डिका को बताए बिना और लागू किए बिना बहुमत से दिए गए पंचाट (अधिनिर्णय) को अपास्त करने में अधिकारिता संबंधी घोर त्रुटि की है, जिसके तहत अभिलेख पर साक्ष्य की पुनः सराहना और पुनर्मूल्यांकन करके तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप करके पंचाट (अधिनिर्णय) को अपास्त किया जा सकता है जो विधि में अस्वीकार्य था।

2. विद्वान जिला न्यायाधीश ने माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को संविदा की शर्तों की अपनी व्याख्या के साथ प्रतिस्थापित किया है जो स्पष्ट रूप से अवैध होने के



अलावा विधि में अस्वीकार्य है।

3. विद्वान जिला न्यायाधीश द्वारा इस प्रकार की गई व्याख्या ईंधन आपूर्ति करार की शर्तों और कण्डिका 2.2 और 2.3 के उद्देश्य और उद्देश्य के विपरीत है जो यह सुनिश्चित करने के लिए है कि वित्तपोषण दस्तावेज मौजूद हैं ताकि अपीलकर्ता (क्रेता) आपूर्ति किए गए कोयले के लिए भुगतान करने में सक्षम हो और इस तरह, विद्वान जिला न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों और विधि के विपरीत होने के कारण अपास्त किए जाने योग्य है।

4. प्रत्यर्थी (एस. ई. सी. एल.) की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री किशोर भादुड़ी, इस प्रकार किए गए तर्कों का जवाब देते हुए, दृढ़ता से निम्नानुसार तर्क करते हैं:-

1. मा.सु. अधिनियम की धारा 34 (2) के तहत आवेदन स्वीकार करने वाले विद्वान जिला न्यायाधीश के आदेश के विरुद्ध मा.सु. अधिनियम की धारा 37 (2) के तहत की गई अपील विचारणीय नहीं है, क्योंकि अपील एक गलत प्रावधान और गलत आधार के तहत दायर की गई है और इस तरह, केवल इसी आधार पर खारिज की जा सकती है।

2. माध्यस्थम् अधिकरण संविदा की शर्तों से परे नहीं जा सकता है और उसे निष्पक्षता, तर्कसंगतता या समानता के आधारों पर विचार करने का अधिकार नहीं है, लेकिन न्यायाधिकरण को केवल एक वैध संविदा से उत्पन्न होने वाले पक्षों के विधिक अधिकारों पर विचार करना है।

3. अपीलार्थी (एल.ए.पी.एल.) ने ईंधन आपूर्ति करार (एफ. एस. ए.) के कण्डिका 2.3 को पूरा नहीं करके उल्लंघन किया है क्योंकि वह कण्डिका अपीलार्थी (क्रेता) को हस्ताक्षर की तिथि अर्थात् संविदा के निष्पादन की तिथि से एक वर्ष की अवधि के भीतर वित्तीय समापन प्राप्त करने के लिए पर्याप्त समय प्रदान करता है, ऐसे में, अपीलकर्ता संविदा में प्रवेश किए बिना वित्तीय समापन प्राप्त करने के लिए बाध्य नहीं है, जैसा कि पूर्ववर्ती शर्त के अनुसार, अपीलकर्ता को वित्तीय समापन होने की तिथि से सात दिनों की अवधि के भीतर विक्रेता को सूचित करना आवश्यक था और वित्तीय समापन निश्चित रूप में वित्तपोषण पक्षों द्वारा जारी दस्तावेजों द्वारा होना चाहिए और वह भी संविदा की अवधि के लिए परिचालन और प्रभावी होगा।

4. यह मानते हुए कि संविदा के निष्पादन से पहले अपीलार्थी द्वारा वित्तीय समापन प्राप्त किया गया था और वह भी 9-9-2005 से 20-9-2005 तक, उस स्थिति में, अपीलार्थी



विक्रेता एस. ई. सी. एल. को पूर्ववर्ती शर्त अर्थात् कण्डिका 2.3 की कण्डिका 'क' को माफ करने के लिए लिखित रूप में सूचित करके एफ. एस. ए. के कण्डिका 2.5 (ख) का सहारा ले सकता था, कि उसने पहले ही इसे प्राप्त कर लिया था। ऐसा नहीं किया गया था और न ही अपीलार्थी द्वारा संविदा के निष्पादन की तिथि से एक वर्ष की अवधि के भीतर वित्तीय समापन प्राप्त किया गया था। इसलिए, विद्वान जिला न्यायाधीश यह अभिनिर्धारित करने में पूरी तरह से उचित है कि अपीलार्थी एफ. एस. ए. की शर्तों के उल्लंघन का दोषी है।

5. चूंकि कोयला एक दुर्लभ वस्तु है और विभिन्न नियंत्रण आदेशों द्वारा नियंत्रित किया जाता है, और इसलिए छत्तीसगढ़ के क्षेत्र में यह एक बड़ी वस्तु है। अतः उत्पादन क्षमता, मांग, आवश्यकता जैसे अन्य प्रासंगिक कारकों को देखते हुए और बिजली खरीद करार के संदर्भ में, प्रत्येक क्रेता के लिए कोयला आवंटित किया जाता है जो विक्रेता के साथ एफ. एस. ए. में प्रवेश करता है। यही कारण है कि कोयले को आरक्षित रखा जाता है और एफ. एस. ए. के तहत एक पक्ष के लिए एक वर्ष की अवधि के लिए आवंटित किया जाता है, विक्रेता द्वारा प्रत्येक क्रेता से ई. एम. डी. के संदर्भ में प्रतिबद्धता गारंटी प्राप्त की जाती है और इस प्रकार, बैंक गारंटी के रूप में प्रतिबद्धता गारंटी की अवधि को एफ. एस. ए. में एक शर्त के रूप में शामिल किया जाता है।

6. अपीलार्थी संविदा की शर्तों के अनुसार आवश्यक बैंक गारंटी देने में भी विफल रहा, इसके बजाय उसने आवश्यक राशि से कम बैंक गारंटी दी थी। चूंकि अपीलार्थी हस्ताक्षर की तिथि से एक वर्ष की अवधि के भीतर वित्तीय समापन प्रस्तुत करने में विफल रहा, इसलिए एफ. एस. ए. के कण्डिका 2.6 (ग) के अनुसार बैंक गारंटी का आह्वान किया गया था। वित्तीय समापन की कथित जानकारी कथित रूप से क्रेता द्वारा विक्रेता को 4-2-2006 पर तिथि गई थी जिसे कभी भी संविदा की शर्तों के अनुसार नहीं कहा जा सकता है, इसलिए, प्रत्यर्थी को संविदा को समाप्त करने और बैंक गारंटी को भुनाने के लिए संविदा की शर्तों के अनुसार पूरी तरह से उचित ठहराया गया था और उनके तर्कों को बल प्रदान करने हेतु एसोसिएट बिल्डर्स बनाम दिल्ली विकास प्राधिकरण¹, ऑयल एण्ड नेचुरल गैस कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम वेस्टर्न गेको इंटरनेशनल लिमिटेड² और सत्यनारायण कंसट्रक्शन कंपनी बनाम भारत संघ व अन्य³ के मामलों में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों का अवलंब लिया गया था।

1 (2015) 3 SCC 49

2 (2014) 9 SCC 263

3 (2011) 15 SCC 101



5. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है और ऊपरोक्त प्रतिद्वंद्वी तर्कों पर विचार किया है तथा अभिलेख का भी अत्यंत सावधानी के साथ परिशीलन किया है।

6. यह सुस्थापित विधि है कि माध्यस्थम् पंचाट को अपास्त करने के लिए मा.सु. अधिनियम की धारा 34 के तहत एक आवेदन की सुनवाई और उस पर विचार करते समय न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की गुंजाइश मा.सु. अधिनियम की धारा 34 में उल्लिखित विशिष्ट आधारों तक सीमित है। कम से कम न्यायिक हस्तक्षेप मूल सूत्र है जो अधिनियम की योजना के माध्यम से चलता है। मा. सु. अधिनियम की धारा 5 न्यायिक हस्तक्षेप की सीमा को केवल अधिनियम में प्रदान की गई सीमा तक सीमित करती है। इसलिए, न्यायालय को मा. सु. अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन पर विचार करते समय उक्त प्रावधान के तहत गिने गए आधारों के आधार पर विवादित माध्यस्थम् पंचाट की जांच और परीक्षण करना होगा जो कि मा. सु. अधिनियम की धारा 34 है।

7. इस स्तर पर, माध्यस्थम् पंचाट में न्यायिक हस्तक्षेप के दायरे का विश्लेषण करना आवश्यक है।

8. माध्यस्थम् पर रसेल (21 वां संस्करण), पृष्ठ 426 ने यह अभिनिर्धारित किया कि न्यायाधिकरण के तथ्य के निष्कर्ष निर्णायक हैं। न्यायालय में अपील केवल कार्यवाही में दिए गए निर्णय से उत्पन्न होने वाले विधि के प्रश्न पर की जा सकती है और निम्नानुसार टिप्पणी की गई:-

"मध्यस्थ तथ्यों के स्वामी होते हैं। एक अपील पर न्यायालय को एक पंचाट (अधिनिर्णय) से उत्पन्न होने वाले विधि के किसी भी प्रश्न पर पूर्ण और शर्तहीन आदेश के आधार पर निर्णय लेना चाहिए। मध्यस्थों के तथ्य के निष्कर्षों की अयोग्य स्वीकृति। यह अप्रासंगिक है कि न्यायालय तथ्य के उन निष्कर्षों को सही मानता है या गलत इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि तथ्य के विवादकों पर मध्यस्थों द्वारा गलती कितनी स्पष्ट हो सकती है, या तथ्य की गलती के वित्तीय परिणामों का पैमाना क्या हो सकता है।"⁴

पक्षकारों को इस नियम को दरकिनार करने की अनुमति नहीं दी जाएगी कि न्यायाधिकरण के तथ्य के निष्कर्ष यह आरोप लगाकर निर्णायक हैं कि वे असंगत⁵ हैं, या वे एक गंभीर अनियमितता⁶, या अधिकारिता⁷ की अधिकता, या इस आधार पर कि प्रश्न 8 में निष्कर्षों का समर्थन करने के लिए अपर्याप्त सबूत थे⁸।"

4 जार्जर्स एस.ए. विरुद्ध ट्रेमो गैस लिमिटेड (द "Georgas" [1993] 1 लॉयर्ड्स Rep. 215 at 228, C.A.

5 मोरन विरुद्ध लॉयर्ड्स [1983] 1 लॉयर्ड्स Rep. 472 ; जार्जर्स एस.ए. विरुद्ध ट्रेमो गैस लिमिटेड (द "Georgas" [1993] 1 लॉयर्ड्स Rep. 215 at 232 ए सी.ए.

6 मोरन विरुद्ध लॉयर्ड्स [1983] 1 लॉयर्ड्स Rep. 472 ; के/एस ए/एस बिल बीख विरुद्ध हुडई कॉरपोरेशन [1988] 1 1 लॉयर्ड्स Rep. 187

7 बैंक मिललाट विरुद्ध जी.ए.ए. डेवीलपमेंट एवं कन्सटेक्शन कम्पनी, [1988] 2 लॉयर्ड्स Rep. 44 at 52

8 जार्जर्स एस.ए. विरुद्ध ट्रेमो गैस लिमिटेड (द "Georgas" [1993] 1 लॉयर्ड्स Rep. 215 at 232



9. डी. पी. महापात्रा, न्यायाधीश, ने सर्वोच्च न्यायालय की ओर से बोलते हुए इंदु इंजीनियरिंग एंड टेक्सटाइल्स लिमिटेड बनाम दिल्ली विकास प्राधिकरण⁹ के मामले में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया :-

“एक मध्यस्थ पक्षकारों द्वारा नियुक्त एक न्यायाधीश होता है और इस प्रकार उसके द्वारा पारित निर्णय में आसानी से हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए।”

10. बहुत पहले वर्ष 2006 में, मैकडर्मोट इंटरनेशनल इंक. वी.बर्न स्टैंडर्ड कंपनी लिमिटेड व अन्य¹⁰ के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि किसी संविदा की व्याख्या मध्यस्थ को निर्धारित करने के लिए एक मामला है, भले ही यह विधि के प्रश्न के निर्धारण को जन्म देता है और माध्यस्थ प्रक्रिया में न्यायालय की पर्यवेक्षी भूमिका को रेखांकित करता है जो निम्नानुसार है:-

“52. 1996 के अधिनियम में माध्यस्थ पंचाट के पुनर्विलोकन हेतु न्यायालय की पर्यवेक्षी भूमिका के लिए प्रावधान केवल निष्पक्षता सुनिश्चित करने हेतु किया गया है। न्यायालय के हस्तक्षेप की परिकल्पना केवल कुछ परिस्थितियों में की जाती है, जैसे कि मध्यस्थों द्वारा धोखाधड़ी या पक्षपात, प्राकृतिक न्याय का उल्लंघन आदि। न्यायालय मध्यस्थों की त्रुटियों को ठीक नहीं कर सकता है। यह केवल पक्षकारों को इच्छा होने पर फिर से माध्यस्थ शुरू करने के लिए स्वतंत्र छोड़ते हुए निर्णय को अपास्त कर सकता है। इसलिए, प्रावधान की योजना का उद्देश्य न्यायालय की पर्यवेक्षी भूमिका को न्यूनतम स्तर पर रखना है और इसे उचित ठहराया जा सकता है क्योंकि करार के पक्ष माध्यस्थ का विकल्प चुनकर न्यायालय के अधिकारिता को बाहर करने के लिए एक सचेत निर्णय लेते हैं क्योंकि वे इसके द्वारा दी गई समीचीनता और अंतिमता को पसंद करते हैं।”	
---	--

11. तत्पश्चात फिज़ा डेवलपर्स एंड इंटर-ट्रेड प्राइवेट लिमिटेड बनाम एमसीआई (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड व एक अन्य¹¹ के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने माध्यस्थ और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत कार्यवाही के दायरे पर विचार किया है और यह अभिनिर्धारित किया है कि माध्यस्थ पंचाट में, माध्यस्थ से संबंधित मामलों में न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप न्यूनतम होना चाहिए और निम्नानुसार टिप्पणी की गई :-

“17. अधिनियम की योजना और प्रावधान न्यायालय और माध्यस्थ से संबंधित दो महत्वपूर्ण पहलुओं का खुलासा करते हैं। पहला यह है कि माध्यस्थ से संबंधित मामलों में न्यायालय द्वारा न्यूनतम हस्तक्षेप होना चाहिए। दूसरा, न्यायालय में लाए गए माध्यस्थ मामलों के संदर्भ में दिखाई गई तात्कालिकता की भावना है, जिसके निराकरण में शीघ्रता की

9 (2001) 5 SCC 691

10 (2006) 11 SCC 181

11 (2009) 17 SCC 796



आवश्यकता होती है।

18. अधिनियम की धारा 5 में प्रावधान है कि उस समय लागू किसी अन्य विधि में कुछ भी निहित होने के बावजूद, अधिनियम के भाग 1 द्वारा शासित मामलों में, कोई भी न्यायिक प्राधिकरण हस्तक्षेप नहीं करेगा, सिवाय इसके कि अधिनियम में ऐसा प्रावधान किया गया हो।

19. अधिनियम की धारा 34 यह स्पष्ट करती है कि एक माध्यस्थ पंचाट को धारा 34 की उप-धारा (2) में उल्लिखित आधारों पर अपास्त किया जा सकता है और किसी अन्य आधार पर नहीं। धारा 34 की उप-धारा (3) में प्रावधान है कि अपास्त किए जाने के लिए आवेदन तीन महीने के पश्चात नहीं किया जा सकता है और अधिकतम देरी जिसे माफ किया जा सकता है वह केवल तीस दिन है। दूसरे शब्दों में, किसी पंचाट (अधिनिर्णय) को चुनौती देने के लिए अधिकतम अवधि तीन महीने और तीस दिन है, भले ही लंबी अवधि की क्षमा लिए पर्याप्त कारण हो।

22. धारा 34 के तहत एक कार्यवाही में जांच का दायरा इस बात पर विचार करने तक सीमित है कि क्या धारा 34 की उप-धारा (2) में उल्लिखित आधारों में से कोई एक पंचाट (अधिनिर्णय) को अपास्त करने के लिए मौजूद है। हम श्री ओ. पी. मल्होत्रा द्वारा लिखित 'द लॉ एण्ड प्रैक्टिस ऑफ आरबिट्रेशन एण्ड कंसिलिएशन' [प्रथम संस्करण, पृ. 768, कण्डिका (1) 34-14] से "चुनौती के आधार" से संबंधित विश्लेषण को अनुमोदनपूर्वक उद्धरित कर सकते हैं।:

"धारा 5 माध्यस्थ प्रक्रिया में न्यायालय के हस्तक्षेप को नियंत्रित करती है। इसमें यह प्रावधान है कि भारत में उस समय लागू किसी अन्य विधि में कुछ भी निहित होने के बावजूद, इस अधिनियम के भाग 1 द्वारा शासित मामलों में, न्यायालय इस भाग में जहां इस तरह का प्रावधान किया गया है, उसके अलावा हस्तक्षेप नहीं करेगी। इस नीति के अनुसार, धारा 34 माध्यस्थ पंचाट को अपास्त करने के न्यायालय के अधिकार पर कुछ प्रतिबंध लगाती है। यह पंचाट (अधिनिर्णय) को अपास्त किए जाने के लिए कुल मिलाकर सात आधार प्रदान करता है। दूसरे शब्दों में, एक माध्यस्थ पंचाट केवल तभी अपास्त किया जा सकता है जब इन सात आधारों में से एक या अधिक मौजूद हों।

धारा 34 (2) (क) में पहले पाँच आधार निर्धारित किए गए हैं। इनमें से किसी भी आधार को सफलतापूर्वक लागू करने के लिए, एक पक्ष को ऐसे एक



या अधिक आधारों के अस्तित्व का अनुरोध करना और साबित करना होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि पंचाट (अधिनिर्णय) को चुनौती देने वाले पक्ष को ऐसे किसी भी आधार के अस्तित्व को दिखाने के लिए पर्याप्त विश्वसनीय सबूत पेश करके मल के बोझ का निर्वहन करना पड़ता है। शेष दो आधार धारा 34 (2) (ख) में निहित हैं जो यह प्रावधान करता है कि यदि विवाद का विषय माध्यस्थम् योग्य नहीं है या आक्षेपित पंचाट (अधिनिर्णय) भारत की सार्वजनिक नीति के साथ टकराव में है तो न्यायालय द्वारा उनकी पहल पर एक पंचाट (अधिनिर्णय) को अपास्त किया जा सकता है।

पंचाट (अधिनिर्णय) को अपास्त किए जाने के लिए आधार विशिष्ट हैं। इसलिए, अनिवार्य रूप से एक याचिकाकर्ता जो एक आवेदन दायर करता है, उसे उप-धारा (2) में उल्लिखित किसी भी आधार के अवयवों को बनाने और उसे साबित करने के लिए आवश्यक तथ्यों का अभिवाक करना होगा। इसलिए, अधिनियम की धारा 34 के तहत एक आवेदन में जो एकमात्र प्रश्न उठता है, वह यह है कि क्या पंचाट (अधिनिर्णय) को उसकी उप-धारा (2) में निर्दिष्ट आधारों में से किसी पर अपास्त किए जाने की आवश्यकता है। उप-धारा (2) भी स्पष्ट रूप से आवेदन करने वाले व्यक्ति पर प्रमाण का भार डालती है। इसलिए, न्यायनिर्णयन के लिए उत्पन्न होने वाला प्रश्न और उस व्यक्ति को भी वैधानिक रूप से निर्दिष्ट किया जाता है जिस पर प्रमाण का भार रखा जाता है। अतः विवादकों की आवश्यकता को समाप्त कर दिया गया है।"

12. तत्पश्चात इसी तरह क्वालिटी मैनुफैक्चरिंग कॉर्पोरेशन बनाम सेन्ट्रल वेयरहाउसिंग कॉर्पोरेशन¹² के मामले में न्यायालय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि माध्यस्थम् अधिनियम, 1940 के तहत माध्यस्थम् पंचाट को अपास्त करने के आवेदन पर विचार करने वाला न्यायालय मध्यस्थ के निष्कर्ष और निर्णय पर अपील में न तो बैठता है, न ही वह साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन कर सकता है या साक्ष्य की पर्याप्तता या अन्यथा की जांच कर सकता है और संक्षिप्त रूप से निम्नानुसार टिप्पणी की है :-

"10. शुरुआत में, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि माध्यस्थम् पंचाटों के संबंध में न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की गुंजाइश सीमित है। अधिनियम की धारा 30 या 33 के तहत एक आवेदन पर विचार करने वाला न्यायालय, मध्यस्थ के निष्कर्षों और निर्णय पर अपील में न तो बैठता है, न ही वह साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन कर सकता है या साक्ष्य की पर्याप्तता या अन्यथा की जांच कर सकता है। मध्यस्थ का निर्णय अंतिम होता है और इसे केवल उन आधारों पर चुनौती दी जा सकती है जिनका उल्लेख अधिनियम की धारा 30 और 33 में किया गया है।



इसलिए, निवेदित तर्कों पर, उच्च न्यायालय के समक्ष विचार के लिए एकमात्र प्रश्न यह था कि क्या निर्णय के सामने कोई स्पष्ट त्रुटि थी और क्या मध्यस्थ ने स्वयं या कार्यवाही का गलत संचालन किया था।"

13. स्टील ऑथोरिटी ऑफ इण्डिया लिमिटेड बनाम गुप्ता ब्रदर स्टील ट्यूब्स लिमिटेड¹³ के मामले में, मध्यस्थ द्वारा संविदा की व्याख्या के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यदि मध्यस्थ द्वारा किसी संविदात्मक कण्डिका के अर्थ के बारे में लिया गया दृष्टिकोण यदि संभव है तथा बेतुका नहीं है, तो इसकी शुद्धता या अन्यथा के बावजूद, यह सुधार के लिए खुला नहीं है और निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया :-

"27. पुनः, मध्यस्थ का दृष्टिकोण कि सेल की ओर से जुलाई-सितंबर, 1988 की तिमाही में सामग्री की आपूर्ति करने से इनकार करने से कारित उल्लंघन प्रतिकर कण्डिका (कण्डिका 7.2) में निहित प्रासंगिक शर्तों के दायरे में नहीं आता है; कल्पना के किसी भी विस्तार में उसे बेतुका दृष्टिकोण नहीं कहा जा सकता है। जुलाई-सितंबर 1988 की तिमाही में सामग्री की आपूर्ति से इनकार करने के लिए कण्डिका 7.2 की गैर-प्रयोज्यता और अक्टूबर-दिसंबर 1988 की तिमाही के लिए सामग्री की देरी से आपूर्ति के बारे में मध्यस्थ का विचार विभिन्न आधारों पर आधारित है, जिन पर निर्णय में विस्तार से चर्चा की गई है। यह पूरी तरह से सही दृष्टिकोण है या नहीं, यह वास्तव में महत्वहीन है, लेकिन ऐसा दृष्टिकोण एक संभावित दृष्टिकोण है जो कण्डिका 7.2 के तर्कसंगत निर्वचन से प्रवाहित होता है।

28. कण्डिका 7.2 के निर्वचन पर मध्यस्थ का दृष्टिकोण संभव होने और तीन न्यायालयों, अर्थात् उप-न्यायाधीश, जिला न्यायाधीश और उच्च न्यायालय में से किसी द्वारा बेतुका या विकृत या अनुचित नहीं पाए जाने के कारण, हमें डर है कि संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत हमारी अधिकारिता के प्रयोग में हस्तक्षेप का कोई प्रकरण नहीं बनता है। एक बार जब मध्यस्थ कण्डिका 7.2 का एक विशेष तरीके से अर्थ लगा लेता है, और ऐसा निर्वचन बेतुका नहीं है और प्रशंसनीय प्रतीत होता है, तो वह न्यायालयों के लिए मध्यस्थ के निर्णय में हस्तक्षेप योग्य नहीं है।"

14. इसी तरह का प्रतिपादन सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सुमितोमो हैवी इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम ऑयल एंड नेचुरल गैस कॉर्पोरेशन लिमिटेड¹⁴ के मामले में गुप्ता ब्रदर स्टील ट्यूब्स लिमिटेड का अवलंब लेते हुए प्रतिपादित किया गया है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि मध्यस्थ का निष्कर्ष प्रकरण के संभावित दृष्टिकोण पर आधारित है, तो न्यायालय से निर्णय में हस्तक्षेप करने की अपेक्षा नहीं की जाती

13 (2009) 10 SCC 63

14 (2010) 11 SCC 296



है। सुमितोमो हैवी इंडस्ट्रीज लिमिटेड की कण्डिका 41 और 42 में सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायमूर्तियों ने निम्नानुसार टिप्पणी की :-

“41. प्रत्यर्थी की ओर से प्रचारित विचार यह था कि कण्डिका 17.3 को प्रतिकर कण्डिका की तरह संक्षिप्त रूप से पढ़ा जाना चाहिए या बीमा पॉलिसी के प्रकरण में एक शाब्दिक व्याख्या दी जानी चाहिए। दूसरी ओर अंपायर ने देखा है कि इस कण्डिका को व्यापक रूप से जोड़ा गया है और यह व्यावसायिक रूप से समझने योग्य और प्रत्यक्ष था क्योंकि इसे एक व्यापक और संभावित अप्रत्याशित स्पेक्ट्रम को कवर करने के लिए डिज़ाइन किया गया था, अर्थात् भविष्य में भारतीय विधि में संभावित परिवर्तन का संभावित प्रभाव। इन परिस्थितियों में अंपायर द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण एक प्रशंसनीय व्याख्या होने के कारण हस्तक्षेप के लिए खुला नहीं है। डिवीजन बेंच ने स्पष्ट रूप से गलती की जब उसने कहा कि कण्डिका 17.3 पर अंपायर का दृष्टिकोण किसी भी तरह से एक प्रशंसनीय या संभावित दृष्टिकोण नहीं है। शायद इसे एक ऐसी स्थिति कहा जा सकता है जहाँ दो विचार संभव हैं, जिनमें से अंपायर ने वैध रूप से एक लिया है। जैसा कि हाल ही में इस न्यायालय द्वारा सेल बनाम गुप्ता ब्रदर स्टील ट्यूब्स लिमिटेड, (2009) 10 एस. सी. सी. 63 में दोहराया गया है, यदि मध्यस्थ का निष्कर्ष मामले के संभावित दृष्टिकोण पर आधारित है, तो न्यायालय से निर्णय में हस्तक्षेप करने की अपेक्षा नहीं की जाती है। उच्च न्यायालय ने इस तरह से हस्तक्षेप कर गलती की है।

42. क्या वर्तमान प्रकरण में निष्कर्ष और पंचाट (अधिनिर्णय) को विकृत के रूप में वर्णित किया जा सकता है? यह न्यायालय पहले ही निर्धारित कर चुका है कि किस निष्कर्ष को विकृत कहा जाएगा। यह एक ऐसा निष्कर्ष है जो न केवल साक्ष्य के भार के विरुद्ध है, बल्कि पूरी तरह से साक्ष्य के विरुद्ध है। इस न्यायालय ने त्रिवेणी रबड़ और प्लास्टिक बनाम सी. सी. ई.¹⁵ में अभिनिर्धारित किया है कि एक विकृत निष्कर्ष वह है जो किसी भी साक्ष्य पर आधारित नहीं है या ऐसा है जिस पर कोई भी उचित व्यक्ति नहीं आया होगा। जब तक यह नहीं पाया जाता है कि कुछ प्रासंगिक साक्ष्य पर विचार नहीं किया गया है या कुछ अस्वीकार्य सामग्री को ध्यान में रखा गया है, तब तक निष्कर्ष को विकृत नहीं कहा जा सकता है। इस संबंध में विधिक स्थिति को हाल ही में अरुलवेलु बनाम राज्य¹⁶ में दोहराया गया है।”

15 1994 Supp (3) SCC 665 : AIR 1994 SC 1341



15. पी. आर. शाह शेयर्स और स्टॉक ब्रोकर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम बी. एच. एच. सिक्योरिटीज प्राइवेट लिमिटेड व अन्य¹⁷ के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत आवेदन पर विचार करते समय, न्यायालय साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन कर निर्णय पर अपील में नहीं बैठ सकता है और निम्नानुसार कहा है :-

“21. कोई न्यायालय साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन कर किसी माध्यस्थम् अधिकरण के फैसले पर अपील में नहीं बैठता है। किसी पंचाट (अधिनिर्णय) को केवल अधिनियम की धारा 34 (2) में उल्लिखित आधारों के तहत चुनौती दी जा सकती है। माध्यस्थम् अधिकरण ने तथ्यों की जांच की है और यह अभिनिर्धारित किया है कि दूसरा प्रत्यर्थी और अपीलार्थी दोनों उत्तरदायी हैं। प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत प्रकरण को स्वीकार कर लिया गया है। यहां तक कि अल्पमत का विचार यह था कि दूसरा प्रत्यर्थी उत्तरदायी था जैसा कि पहले प्रत्यर्थी द्वारा दावा किया गया था, लेकिन अपीलकर्ता केवल इस आधार पर उत्तरदायी नहीं था कि स्टॉक एक्सचेंज द्वारा उप-विधि 248 के तहत नियुक्त मध्यस्थों को, एक गैर-सदस्य के विरुद्ध दावे में, किसी अन्य सदस्य के विरुद्ध दावे का फैसला करने का कोई अधिकारिता नहीं था। बहुमत का निष्कर्ष यह है कि अपीलार्थी ने दूसरे प्रत्यर्थी के नाम पर लेन-देन किया था और इसलिए वह दूसरे प्रत्यर्थी के साथ उत्तरदायी है। इसलिए, अधिनियम की धारा 34 (2) के तहत किसी भी आधार के अभाव में, यह पता लगाने के लिए तथ्यों की फिर से जांच करना संभव नहीं है कि क्या कोई पृथक निर्णय लिया जा सकता है।”

16. राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड बनाम दीवान चंद राम सरन के प्रकरण में गुप्ता ब्रदर स्टील ट्यूब्स लिमिटेड¹⁸ और सुमितोमो हैवी इंडस्ट्रीज लिमिटेड (पूर्वोक्त) का अवलंब लेते हुए सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायमूर्तियों ने अभिनिर्धारित किया है कि यदि मध्यस्थ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण संभव है, तो इसे न्यायिक समीक्षा के अधीन नहीं किया जा सकता है, भले ही संविदा दो व्याख्याओं में सक्षम हो और निम्नानुसार टिप्पणी की :-

“43. किसी भी प्रकरण में, यह मानते हुए कि कण्डिका 9.3 दो व्याख्याओं में सक्षम था, मध्यस्थ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से संभव था, यदि प्रशंसनीय न भी रहा हो। यह कहना संभव नहीं है कि मध्यस्थ ने अपने अधिकारिता से बाहर यात्रा की थी, या यह कि उसके द्वारा लिया गया दृष्टिकोण संविदा की शर्तों के विरुद्ध था। यह स्थिति होने के कारण, उच्च न्यायालय के पास निर्णय में हस्तक्षेप करने और मध्यस्थ द्वारा स्वीकार की गई व्याख्या

16 (2009) 10 SCC 206 : (2010) 1 SCC (Cri) 288

17 (2012) 1 SCC 594

18 (2012) 5 SCC 306



के स्थान पर अपने विचार को प्रतिस्थापित करने का कोई कारण नहीं था।

44. इस संबंध में विधिक स्थिति का सारांश उपर संदर्भित सेल बनाम गुप्ता ब्रदर्स स्टील ट्यूब्स लिमिटेड, (2009) 10 एस.सी.सी. 63 में इस न्यायालय के निर्णय की कण्डिका 18 में दिया गया है। इसी तरह का दृष्टिकोण बाद में सुमितोमो हेवी इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम ओएनजीसी लिमिटेड, (2010) 11 एससी 296 में अपनाया गया है जिसमें हममें से एक (गोखले, न्यायाधीश) एक पक्षकार थे। उसकी कण्डिका 43 में की गई टिप्पणी इस संबंध में निर्देशात्मक है।"

17. एमएसके प्रोजेक्ट्स इंडिया (जेवी) लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य व एक अन्य¹⁹ के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि संविदा के निर्माण में त्रुटि को अधिकारिता विहीन नहीं माना जा सकता है और निम्नानुसार संक्षिप्त टिप्पणी की है:—

"17. यदि मध्यस्थ संविदा के निर्माण में कोई त्रुटि करता है, तो यह उसके अधिकारिता में एक त्रुटि है। लेकिन अगर वह संविदा से बाहर भटकता है और उन मामलों से निपटता है जो उसे आवंटित नहीं किए गए हैं, तो वह एक अधिकारिता की त्रुटि करता है। ऐसे मामलों में बाहरी साक्ष्य स्वीकार्य है क्योंकि विवाद कुछ ऐसा नहीं है जो संविदा के तहत या उसके संबंध में उत्पन्न होता है या संविदा के निर्माण पर निर्भर करता है या पंचाट (अधिनिर्णय) के भीतर निर्धारित किया जाता है। ऐसे मामलों में, बाहरी साक्ष्य को स्वीकार करके पंचाट (अधिनिर्णय) की अस्पष्टता का समाधान किया जा सकता है। इस नियम का औचित्य यह है कि विवाद की प्रकृति कुछ ऐसी है जिसे पंचाट (अधिनिर्णय) में जो दिखाई देता है उससे बाहर और स्वतंत्र रूप से निर्धारित किया जाना है। इस तरह की अधिकारिता की त्रुटि को पंचाट (अधिनिर्णय) के लिए बाहरी साक्ष्य द्वारा साबित करने की आवश्यकता है। गोवर्धन दास बनाम लक्ष्मी राम²⁰, थवरदास पेरुमल बनाम भारत संघ²¹, भारत संघ बनाम किशोरीलाल गुप्ता एण्ड ब्रदर्स²², अलोपी प्रसाद एण्ड सन्स लिमिटेड बनाम भारत संघ²³, जिवराजभाई उजामशी सेठ बनाम चिन्तामणराव बालाजी²⁴ तथा रेणुसागर पॉवर कम्पनी लिमिटेड बनाम जनरल इलेक्ट्रिक कंपनी²⁵ देखें।"

19 (2011) 10 SCC 573

20 AIR 1954 SC 689

21 AIR 1955 SC 468

22 AIR 1959 SC 1362

23 AIR 1960 SC 588

24 AIR 1965 SC 214

25 (1984) 4 SCC 679 : AIR 1985 SC 1156



18. हाल ही में, एसोसिएट बिल्डर्स (पूर्वोक्त) में, सर्वोच्च न्यायालय ने एम. एस. के. प्रोजेक्ट्स इंडिया (जे. वी.) लिमिटेड (पूर्वोक्त) अन्य पूर्व निर्णयों पर ध्यान दिया और यह अभिनिर्धारित किया कि माध्यस्थम् पंचाट के गुणों पर तभी आक्षेप किया जा सकता है जब यह भारत की सार्वजनिक नीति के साथ टकराव में हो और पंचाट (अधिनिर्णय) को केवल माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 (2) में उल्लिखित आधारों पर अपास्त किया जा सकता है, अन्यथा नहीं।

19. स्वैन गोल्ड माइनिंग लिमिटेड बनाम हिंदुस्तान कॉपर लिमिटेड²⁶ के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 (2) से संबंधित न्यायालय मध्यस्थ द्वारा दर्ज किए गए तथ्यों के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है और साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन नहीं कर सकता है और निम्नानुसार टिप्पणी की :-

“11. माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 माध्यस्थम् अधिनियम, 1940 की धारा 30 के अनुरूप है जो माध्यस्थम् पंचाट को अपास्त करने का प्रावधान करती है। अधिनियम की धारा 34 की उप-धारा (2) के संदर्भ में, एक माध्यस्थम् पंचाट केवल तभी अपास्त किया जा सकता है जब उसमें निर्दिष्ट शर्तों में से एक संतुष्ट हो। मध्यस्थ के निर्णय को आम तौर पर पक्षों के बीच बाध्यकारी माना जाता है और इसलिए, पंचाट (अधिनिर्णय) को अपास्त करने की न्यायालय की शक्ति का प्रयोग केवल उन मामलों में किया जाएगा जहां न्यायालय को लगता है कि मध्यस्थ पंचाट (अधिनिर्णय) गलत या स्पष्ट रूप से अवैध या अधिनियम के प्रावधानों के उल्लंघन में है। यह एक सुव्यवस्थित प्रस्ताव है कि न्यायालय सामान्य रूप से मध्यस्थ की व्याख्या के स्थान पर अपनी व्याख्या नहीं करेगा। इसी तरह, जब पक्ष एक संपन्न संविदा पर पहुंच जाते हैं और संविदा के उन नियमों और शर्तों के आधार पर कार्य करते हैं, तो मध्यस्थ या न्यायालय द्वारा संविदा में नई शर्तों को प्रतिस्थापित करना गलत या अवैध होगा।

12. यह समान रूप से सुस्थापित है कि पक्षों द्वारा नियुक्त मध्यस्थ तथ्यों का अंतिम न्यायाधीश है। उसके द्वारा दर्ज किए गए तथ्यों के निष्कर्ष में इस आधार पर हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है कि उसके द्वारा संविदा की शर्तों की सही व्याख्या नहीं की गई थी।”

20. सबसे अंत में, हाल ही में, सेन्ट्रोटेड मिनेरल्स एण्ड मेटल इंक. बनाम हिंदुस्तान कॉपर लिमिटेड²⁷ के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ ने पहले के निर्णयों को ध्यान में रखते हुए एसोसिएट बिल्डर्स (पूर्वोक्त) में भी अनुमोदन के साथ निर्णय का पालन करते हुए निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया :-

26 (2017) 2 SCC 228

27 (2017) 2 SCC 228



“45. हमारे देश में, इस विषय पर प्रकरण के विधि पर हाल ही में एसोसिएट बिल्डर्स बनाम डीडीए, (2015) 3 एससीसी 49 में विस्तृत चर्चा की गई है और कहा गया है, और इस पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता नहीं है। संक्षेप में, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि एक पंचाट (अधिनिर्णय) को अपास्त किया जा सकता है यदि यह निम्नलिखित के विपरीत हो :

(क) भारतीय विधि की मौलिक नीति; या

(ख) भारत का हित; या

(ग) न्याय या नैतिकता, या

(घ) यदि यह स्पष्ट रूप से अवैध है।”

21. सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायमूर्तियों द्वारा दिए गए उपर्युक्त निर्णयों के संदर्भ से पता चलता है कि यदि मध्यस्थ संभावित या प्रशंसनीय दृष्टिकोण अपनाकर संविदा के निर्माण में कोई त्रुटि करता है, तो यह अधिकारिता के भीतर एक त्रुटि है और निर्माण में ऐसी त्रुटि को अधिकारिता के बिना नहीं कहा जा सकता है। केवल वहाँ जहाँ मध्यस्थ संविदा से बाहर भटकता है, वह अधिकारिता की त्रुटि करता है। इसी तरह, न्यायालय माध्यस्थम् अधिकरण के निष्कर्षों पर अपील की न्यायालय के रूप में नहीं बैठेगा, न ही वह माध्यस्थम् अधिकरण के दृष्टिकोण को प्रतिस्थापित करने के लिए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन कर सकता है।

22. माध्यस्थम् पंचाट में न्यायिक हस्तक्षेप की गुंजाइश पर ध्यान देना मुझे मामले के गुण-दोष पर लाएगा। इस स्तर पर, बैंक गारंटी की समाप्ति और परिणामी आह्वान के लिए कथित आधारों पर ध्यान देना उचित होगा जैसा कि प्रत्यर्थी के (एस. ई. सी. एल.) पत्र दिनांक 29-2-2008 में प्रदान किया गया है, जो निम्नानुसार है :-

1. अपीलार्थी- एल. ए. पी. एल. ने संविदा का उल्लंघन किया क्योंकि संविदा के लिए अपीलार्थी को वित्तीय समापन के एक सप्ताह पश्चात एस. ई. सी. एल. को सूचित करने की आवश्यकता थी और उस संविदा के लिए अपीलार्थी को हस्ताक्षर की तिथि के एक वर्ष के भीतर वित्तीय समापन प्राप्त करने की आवश्यकता थी, जबकि अपीलार्थी ने एस. ई. सी. एल. को 4-2-2006 पर सूचित किया कि उसने हस्ताक्षर की तिथि से पहले 20-9-2005 पर वित्तीय समापन हासिल कर लिया था और इस जानकारी को अपीलार्थी (एल. ए. पी. एल.) द्वारा एफ. एस. ए. पर हस्ताक्षर करने के समय दबा दिया गया था।

2. एफ. एस. ए. के विपरीत, अपीलार्थी एल. ए. पी. एल. वित्तीय समापन के 30 दिनों के



भीतर चार महीने की अवधि का संकेत देने में विफल रहा क्योंकि अपीलार्थी ने 20-9-2005 पर वित्तीय समापन हासिल कर लिया है और इस प्रकार, इसे दबा दिया जाता है।

3. अपीलार्थी-एल. ए. पी. एल. ने एफ. एस. ए. में प्रवेश करने से पहले एफ. एस. ए. द्वारा आवश्यक सभी आवश्यक अनुमतियाँ प्राप्त कर ली थीं, जिनका एफ. एस. ए. में प्रवेश करते समय खुलासा नहीं किया गया था, जिससे एस. ई. सी. एल. के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। 4. अपीलार्थी-एल. ए. पी. एल. कण्डिका 2.6 (ख) के संदर्भ में हस्ताक्षर की तिथि से एक वर्ष के भीतर बैंक गारंटी/प्रतिबद्धता अग्रिम जमा करने में विफल रहा और इस तरह एफ. एस. ए. का उल्लंघन किया।

23. कार्यवाही शुरू करने से पहले माध्यस्थम् पंचाट में माध्यस्थम् अधिकरण के बहुमत के दृष्टिकोण के निष्कर्षों पर ध्यान देना उचित होगा मामले के साथ आगे। माध्यस्थम् अधिकरण ने एफ. एस. ए. को समाप्त करने और बैंक गारंटी को लागू करने के लिए समाप्ति पत्र में उल्लिखित उपरोक्त सभी चार आधारों पर चर्चा की और उन पर विचार किया और अन्य बातों के साथ-साथ इन सभी चार आधारों को गुणहीन और आधारहीन पाया कि :-

1. अपीलार्थी मैसर्स लैंको अमरकंटक पावर लिमिटेड ने करार की तिथि से बहुत पहले ही वित्तीय समापन प्राप्त कर लिया है अर्थात् 9-9-2005/ 20-9-2005 और एफ. एस. ए. के कण्डिका 2.4 का उच्चतम स्तर पर कोई उल्लंघन नहीं हुआ है, क्योंकि उक्त कण्डिका उस बाहरी सीमा को निर्दिष्ट करता है जिसके भीतर क्रेता (एल. ए. पी. एल.) को वित्तीय समापन प्राप्त करना होगा।

2. एफ. एस. ए. के कण्डिका 2.3 में पूर्ववर्ती रूप से शामिल की गई तीन शर्तें हैं, पहली शर्त वित्तीय समापन, दूसरी शर्त परियोजना के संबंध में पर्यावरण मंजूरी सहित आवश्यक मंजूरी/अनुमोदन प्राप्त करना और तीसरी शर्त यह है कि दोनों पक्षों को संयुक्त रूप से कोलियरी कंट्रोल ऑर्डर, 1945 के कण्डिका 14 के तहत अधिसूचना के लिए भारत शासकीय से संपर्क करना चाहिए था, जैसा कि उसमें निर्धारित किया गया है। यह अभिनिर्धारित किया गया कि वित्तीय समापन करार की तिथि से बहुत पहले प्राप्त किया गया था और पर्यावरण मंजूरी आदि भी उससे बहुत पहले प्राप्त की गई थी, अर्थात् कोलियरी नियंत्रण आदेश, 1945 के कण्डिका 14 के तहत अधिसूचना के लिए भारत शासकीय से संपर्क करने के संबंध में शर्त संख्या 3 को प्राप्त नहीं किया जा सका क्योंकि आवश्यक वस्तु अधिनियम में करार पर 24-12-2006 को हस्ताक्षर करने के पश्चात संशोधन किया गया था, और कोयले को आवश्यक वस्तु अधिनियम के दायरे से हटा दिया गया था, इसलिए



किसी अधिसूचना की आवश्यकता नहीं थी। हालाँकि अपीलार्थी ने तीसरी शर्त को माफ करने के लिए दिनांक 11-6-2007 के पत्र द्वारा अनुरोध किया था, लेकिन ऐसा नहीं किया गया था, क्योंकि चार महीने की अवधि की गणना प्रभावी तिथि से अनिवार्य रूप से की जानी थी, क्योंकि प्रभावी तिथि तक नहीं पहुँचा गया था और इसलिए चार महीने की अवधि की सूचना नहीं तिथि जा सकती थी। एफ. एस. ए. के कण्डिका 4.3 का कोई उल्लंघन नहीं है और दावाकर्ता द्वारा वित्तीय समापन के 30 दिनों के भीतर चार महीने की अवधि का संकेत देने में विफलता के आधार पर संविदा की समाप्ति, समाप्ति के लिए एक वैध आधार नहीं है।

3. एफ. एस. ए. के कण्डिका 2.3 के अनुसार पक्षों द्वारा प्रभावी तिथि तक नहीं पहुँचा गया था और संविदा में प्रभावी तिथि का वर्णन किया गया है। प्रभावी तिथि आ गई थी या नहीं, यह पूर्णतः से संविदा में निर्धारित प्रभावी तिथि से संबंधित प्रावधान की व्याख्या करने का विषय है और संविदा के तहत प्रभावी तिथि ? का अर्थ 31 दिसंबर, 2005 होगा, जिसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

24. विद्वान जिला न्यायाधीश ने माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 (2) के तहत एक आवेदन का न्यायनिर्णयन करते समय उपरोक्त निष्कर्षों तथा पंचाट में निम्नलिखित दो प्रश्नों को तैयार कर तथा उनका उत्तर देकर अपने आक्षेपित आदेश द्वारा हस्तक्षेप किया।

1. क्या प्रत्यर्थी दावाकर्ता द्वारा अपीलार्थी को दिनांक 9-9-2005 के वित्तीय समापन की सूचना संविदा के संदर्भ में पर्याप्त सूचना थी? अगर ऐसा है तो

2. क्या अपीलार्थी द्वारा 31-12-2005 दिनांकित करार की समाप्ति वैध थी?

25. विद्वान जिला न्यायाधीश अपने आदेश में इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि एफ. एस. ए. के कण्डिका 2.4 का उल्लंघन अपीलार्थी द्वारा किया गया था, क्योंकि एफ. एस. ए. के निष्पादन की तिथि से पहले वित्तीय समापन हो गया था और अपीलार्थी द्वारा इस न्यायालय के समक्ष दायर रिट याचिका में प्रभावी तिथि स्वीकार कर ली गई थी और इसलिए 31.12.2005 प्रभावी तिथि होगी और माध्यस्थम् अधिकरण संविदा की शर्तों से आगे निकल गया है, क्योंकि एफ. एस. ए. में उल्लिखित तीन पूर्व शर्तों को अपीलार्थी (एल. ए. पी. एल.) द्वारा पूरा नहीं किया गया था और इस तरह माध्यस्थम् पंचाट को दरकिनार करते हुए मा.सु. अधिनियम की धारा 34 (2) के तहत आवेदन की अनुमति तिथि गई थी।

26. यह मुझे इस प्रश्न पर लाएगा कि क्या विद्वान जिला न्यायाधीश द्वारा 1996 के अधिनियम की धारा 34 (2) के तहत आवेदन पर विचार करते समय बहुमत द्वारा दिए गए माध्यस्थम् पंचाट में हस्तक्षेप किया जाना न्यायसंगत था।



27. बार में किए गए अभिवाक् की शुद्धता का न्याय करने के लिए कि विद्वान जिला न्यायाधीश ने माध्यस्थम् अधिकरण के तथ्यों के निष्कर्षों की शुद्धता की जांच करने के लिए गलत और अवैध रूप से आगे बढ़े हैं और निष्कर्षों को अपने स्वयं के निष्कर्षों के साथ प्रतिस्थापित किया है और कण्डिकाओं की व्याख्या को प्रतिस्थापित कर स्पष्ट और वृहद विधिक त्रुटि भी की है जैसा कि माध्यस्थम् पंचाट में उसकी अपनी व्याख्या के साथ किया गया है, एफ. एस. ए. के प्रासंगिक कण्डिकाओं पर ध्यान देना उचित होगा।

1. " परिभाषाएँ :

"प्रतिबद्धता अग्रिम" का अर्थ है क्रेता द्वारा कण्डिका 2.6 (ख) की शर्तों के अनुसार गणना और भुगतान किया गया विक्रेता को भुगतान। दो महीने का कोयला मूल्य (हस्ताक्षर की तिथि के एक वर्ष पश्चात)।

"पूर्ववर्ती शर्तों" का अर्थ है कण्डिका 2.3 में निर्धारित इस करार की पूर्ववर्ती सभी शर्तें।

.....

"अग्रिम धन" से अभिप्रेत है, क्रेता द्वारा विक्रेता को कण्डिका 2.6 (क) के अनुसार गणना और भुगतान किया गया भुगतान, एक महीने के कोयले का मूल्य (हस्ताक्षर की तिथि पर/से पहले)

"प्रभावी तिथि" का अर्थ है वह तिथि जिस पर करार कण्डिका 2.2 की शर्तों के अनुसार प्रभावी हो जाता है, अर्थात् वह तिथि जिस पर सभी पूर्व शर्तों को पूरा किया गया है या माफ कर दिया गया है।

.....

"वित्तीय समापन" का अर्थ है सभी वित्तपोषण दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करना और इसके तहत निधियों की प्रारंभिक उपलब्धता से पहले की सभी शर्तों को पूरा करना।

"वित्तपोषण दस्तावेजों" का अर्थ है निश्चित, निष्पादित प्रलेखन जिसके अनुसार वित्तपोषण दल सामूहिक रूप से या अलग-अलग रूप से संयंत्र के निर्माण और संचालन के लिए आवश्यक धन को प्रतिबद्ध करते हैं।

2.2. कार्यकाल

यह करार, जब तक कि इसकी शर्तों के अनुसार पहले समाप्त नहीं किया जाता है, 10 वर्षों



की अवधि के लिए लागू रहेगा, जो 5 वर्षों के पश्चात समीक्षा के अधीन होगा और प्रारंभिक कार्यकाल की समाप्ति के पश्चात 5 और वर्षों तक बढ़ाया जा सकता है, जो उस तिथि ("प्रभावी तिथि") से प्रभावी होगा जिस पर सभी पूर्ववर्ती शर्तों को या तो पूरा किया गया है या छूट देने में सक्षम होने के कारण, उस पक्ष द्वारा माफ कर दिया गया है जिसके लाभ के लिए शर्त लगाई गई थी, और इस संबंध में एक संयुक्त सूचना पर विक्रेता और क्रेता द्वारा सभी पूर्ववर्ती शर्तों की संतुष्टि की पुष्टि करते हुए हस्ताक्षर किए गए हैं।

2.3 पूर्व शर्तें

इस करार के तहत पार्टियों के दायित्व (कण्डिका 2.3, कण्डिका 2.4, कण्डिका 2.5, कण्डिका 2.6, कण्डिका 2.7 और कण्डिका 13.2 में निर्धारित दायित्वों के अलावा और वे दायित्व जो विशेष रूप से पूर्व शर्तों की संतुष्टि से पहले किए जाने के लिए प्रदान किए गए हैं) हस्ताक्षर की तिथि के एक वर्ष के भीतर निम्नलिखित शर्तों की पूर्ण संतुष्टि के अधीन हैं (या ऐसी अन्य विस्तारित अवधि जिस पर इस करार की शर्तों के अनुसार लिखित रूप में सहमति हो सकती है)।

क. संयंत्र का वित्तीय समापन हुआ होगा; और

ख. क्रेता ने वैध प्राधिकारी/प्राधिकारियों से संयंत्र के संबंध में पर्यावरण मंजूरी सहित सभी आवश्यक अनुमोदन, लाइसेंस, सहमति प्राप्त कर ली होगी; और

ग. विक्रेता और क्रेता ने संयुक्त रूप से भारत शासकीय से संपर्क किया होगा और भारत शासकीय ने आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 के तहत लागू कोलियरी नियंत्रण आदेश, 2000 की धारा 14 के अनुसार एक अधिसूचना जारी की होगी, कि यह करार ऐसे आदेश के संचालन से मुक्त है; और

2.4 वित्तीय समापन की अधिसूचना

इस कण्डिका 2 के अन्य प्रावधानों के अधीन, क्रेता ने हस्ताक्षर की तिथि से एक वर्ष के भीतर वित्तीय समापन प्राप्त कर लिया होगा। क्रेता विक्रेता को उस तिथि के बारे में सूचित करेगा जिस पर वित्तीय समापन होपश्चात के एक सप्ताह के भीतर होता है।

2.5 पूर्व शर्तों से संबंधित प्रावधान

(क) पूर्व शर्तों का अनुपालन



दोनों पक्ष ऐसे सभी कदम उठाएंगे जो यथोचित रूप से आवश्यक है और पूर्व शर्तों से पूरी तरह से संतुष्टि प्राप्त करने के लिए मेहनती प्रयास करेंगे।

(ख) पूर्व शर्तों की छूट

पूर्ववर्ती किसी भी शर्त को किसी भी समय उस पक्ष के अलावा जो ऐसी शर्त को पूरा करने के लिए उत्तरदायी थी, अन्य पक्ष द्वारा लिखित रूप में माफ किया जा सकता है, बशर्ते कि कण्डिका 2.3 (क) में निर्दिष्ट शर्त पूर्ववर्ती को केवल विक्रेता और क्रेता के बीच लिखित करार द्वारा माफ किया जा सकता है।

2.6 अग्रिम धन और प्रतिबद्धता अग्रिम

(क) हस्ताक्षर की तिथि को या उससे पहले लेकिन करार पर हस्ताक्षर करने से पहले, क्रेता ने रु. 5,87,50,000/- (रु. पाँच करोड़ सत्तासी लाख पचास हजार मात्र) विक्रेता को अग्रिम धन के रूप में [ऐसे भुगतान की तिथि को लागू आधार मूल्य के मूल्य के बराबर राशि, 12 महीने के पूर्ण परिचालन वर्ष के आधार पर संयंत्र के लिए कोयले की संविदा मात्रा, जिसे बारह (12) से विभाजित किया गया है], जिसकी प्राप्ति विक्रेता एतद्द्वारा स्वीकार करता है।

(ख) हस्ताक्षर की तिथि से एक वर्ष के बाद क्रेता विक्रेता को छह (6) से विभाजित संयंत्र के लिए कोयले की संविदा मात्रा (12 महीने के पूर्ण परिचालन वर्ष पर आधारित) के आधार मूल्य (जैसे कि ऐसे भुगतान की तिथि पर लागू होता है) के मूल्य के बराबर प्रतिबद्धता अग्रिम ("प्रतिबद्धता अग्रिम") के लिए एक बैंक गारंटी प्रस्तुत करेगा।

... ..

(घ) यदि क्रेता वित्तीय समापन के 30 (तीस) दिनों के भीतर विक्रेता को लिखित रूप में सूचित करने में विफल रहता है, तो विक्रेता द्वारा अर्जित धन और प्रतिबद्धता अग्रिम के लिए बैंक गारंटी का आह्वान किया जाएगा, जो कण्डिका 4.3 (ख) के संदर्भ में चार महीने की अवधि है।

(ड.) यदि विक्रेता द्वारा इस करार के अनुसार अग्रिम धन के लिए बैंक गारंटी का आह्वान किया गया है, तो विक्रेता क्रेता को 10 दिनों का नोटिस देकर और इस तरह की समाप्ति पर इस करार को समाप्त करने का हकदार होगा तथा ऐसी समाप्ति पर किसी पक्ष के पास अर्जित धन की जब्ती के संबंध में प्रासंगिक कण्डिकाओं के तहत निर्दिष्ट दायित्वों के अलावा कोई अन्य दायित्व नहीं होगा; बशर्ते कि यदि उक्त सूचना के 10 दिनों के तथापि तर क्रेता द्वारा



प्रतिबद्धता अग्रिम के लिए बैंक गारंटी प्रस्तुत की जाती है, तो करार प्रतिबद्धता अग्रिम का भुगतान न करने के आधार पर समाप्त होने के लिए उत्तरदायी नहीं होगा।

.....

4.3 पहली डिलीवरी की तिथि

(क) यह सहमति है कि पहली डिलीवरी की तिथि चार महीने की अवधि "चार महीने की खिड़की" के भीतर होगी, जिसकी शुरुआत प्रभावी तिथि से 26 महीने से पहले या प्रभावी तिथि से 36 महीने के बाद नहीं होगी।

(ख) वित्तीय समापन के 30 (तीस) दिनों के भीतर, क्रेता चार महीने की खिड़की का संकेत देगा जो उपरोक्त उपकण्डिका (क) में निर्दिष्ट जल्द से जल्द और अंतिम दिनों के भीतर आएगी, तथापि यदि क्रेता चार महीने की खिड़की का संकेत देने में विफल रहता है, तो विक्रेता द्वारा अग्रिम धन (अर्नेस्ट मनी) और प्रतिबद्धता (कमिटमेंट एडवांस) के लिए बैंक गारंटी का आह्वान किया जाएगा और क्रेता को बिना किसी संदर्भ या सूचना के करार को समाप्त कर दिया जाएगा।

28. (1) यह मुझे वर्तमान प्रकरण के तथ्यों पर लाएगा। 09.09.2005 दिनांकित ज्ञापन द्वारा, अपीलार्थी (एल. ए. पी. एल.) ने प्रत्यर्थी (एस. ई. सी. एल.) को सूचित किया कि अपीलार्थी कंपनी ने सभी वैधानिक मंजूरी प्राप्त कर ली है और वित्तीय समापन भी प्राप्त कर लिया है और एफ. एस. ए. पर हस्ताक्षर करने की तिथि की पुष्टि के लिए अनुरोध किया है। 09-09-2005 दिनांकित ज्ञापन में निम्नानुसार कहा गया है :-

“संदर्भ : एलएपीपीएल/एसईसीएल/602/1947 9 सितम्बर, 2005

श्री अरुण सिन्हा,
महाप्रबंधक (एस एंड एम),
साउथ ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड,
पी. ओ. एस. ई. सी. एल, सीपत रोड,
बिलासपुर (छ.ग.) 495,006
दूरभाष : 07752-240584, 240432
फैक्स : 07752-242058
प्रिय महोदय,



विषय :- छत्तीसगढ़ के कोरबा जिले में लैंको थर्मल पावर स्टेशन - ईंधन आपूर्ति करार- के संबंध में।

आप कृपया इस बात से अवगत होंगे कि 300 मेगावाट के विन्यास के साथ लैंको अमरकंटक पावर प्राइवेट लिमिटेड (लैंको) की पहली इकाई को सभी वैधानिक मंजूरी दे दी गई है और हमें यह बताते हुए खुशी हो रही है कि पहली 300 मेगावाट इकाई के लिए वित्तीय समापन हासिल कर लिया गया है (वितरण अभी होना बाकी है)।

कोयला मंत्रालय (एम. ओ. सी.) के एस. एल. सी. द्वारा 20.12.2004 को हमारी परियोजना के पहले चरण की 300 एम. डब्ल्यू. इकाई के लिए प्रति वर्ष डेढ़ एम. टी. का दीर्घकालिक कोयला संयोजन प्रदान किया गया है। यह जुड़ाव कोरबा कोलफील्ड्स ऑफ साउथ ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड (एस. ई. सी. एल.) से दिया गया है और हम तब से ईंधन आपूर्ति करार (एफ. एस. ए.) करने के लिए एस. ई. सी. एल. के साथ लगातार बातचीत कर रहे हैं।

यहां हम आपको सूचित करना चाहते हैं कि मॉडल एफ. एस. ए. के विभिन्न कण्डिकाओं पर एस. ई. सी. एल. और एल. ए. एन. सी. ओ. के अधिकारियों के बीच कई दौर की चर्चा हुई और सही मसौदा एफ. एस. ए. एल. ए. एन. सी. ओ. द्वारा तैयार किया गया था और नवंबर 2004 में एस. ई. सी. एल. को प्रस्तुत किया गया था। इसके बाद, एस. ई. सी. एल. ने कुछ परिवर्तनों के साथ एफ. एस. ए. का अंतिम मसौदा तैयार किया है और एस. ई. सी. एल. के बोर्ड से मंजूरी पर हस्ताक्षर करने के लिए तैयार था।

यहाँ, हम आपको सूचित करना चाहेंगे कि परियोजना के चरण #1 पर्याप्त प्रगति हासिल कर ली गई थी तथा भूमि के अर्जन, ई. पी. सी. के साथ संविदा पर हस्ताक्षर, आवश्यक पर्यावरण और वैधानिक मंजूरी आदि जैसे प्रमुख गतिविधियों पूरी कर ली गई हैं और वित्तीय संस्थानों से धन के वितरण पर स्थल निर्माण गतिविधियों को शुरू करने के लिए तैयार है।

इसके अलावा, हम यह बताना चाहेंगे कि हम अपनी पहली इकाई के वित्तीय समापन को केवल अपने उपक्रम और वित्तीय संस्थानों को एफ. एस. ए. पर हस्ताक्षर करने की पुष्टि के साथ प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए, वित्तीय संस्थान एफ. एस. ए. पर हस्ताक्षर होने तक मार्जिन वितरित करने के लिए तैयार नहीं हैं।

उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए और समय पर परियोजना निर्माण गतिविधियों को शुरू करने के लिए, बिजली मंत्रालय और ओ. ई. ए. के लिए हमारे द्वारा प्रतिबद्ध लक्ष्य को पूरा करने



की तिथि को प्राप्त करने के लिए, हम एस. ई. सी. एल. से अनुरोध करते हैं कि कृपया हमारे अनुरोध पर विचार करें और एफ. एस. ए. पर हस्ताक्षर करने की तिथि की पुष्टि करें क्योंकि यह परियोजना के लिए एक आवश्यक आवश्यकता है क्योंकि ऋण वितरण केवल एफ. एस. ए. के बाद ही होगा। इसलिए हम परियोजना के मील के पत्थर को प्राप्त करने के लिए आपकी सहायता और समर्थन का अनुरोध करते हैं।

धन्यवाद महोदय,

सादर नमन के साथ,

के. राजा गोपाल

निदेशक (परियोजना)

raj@lancogroup.com"

(2) तत्पश्चात अपीलार्थी के ऋणदाता- पावर फाइनेंस कॉर्पोरेशन लिमिटेड ने अपना 16-9-2005 दिनांकित पुष्टिकरण नोटिस निम्नानुसार जारी किया :-

"सं. 02:13/सी एच:एलएपीपी.एल/एल 0101001/वॉल्यूम II 16.09.05

ऋणदाता पुष्टिकरण नोटिस

श्री टी. वी कृष्ण

मुख्य कार्यपालन अधिकारी

लैंको अमरकंटक पावर प्राइवेट लिमिटेड

लैंको हाउस, 141, एवेन्यू #8, बंजारा हिल्स

हैदराबाद- 500 034

देवियों और सज्जनों,

यह सूचना ऋणकर्ता की 14/09/2005 दिनांकित सूचना के संबंध में सुविधा करार की कण्डिका 2.2.1C(f) के अनुसरण में जारी की गई है।

1. हम एतद्द्वारा यह कहते हैं कि इसकी तिथि तक, हमें सुविधा करार के अनुसार किसी भी वरिष्ठ रुपया 'क' ऋणदाता और वरिष्ठ रुपया ऋण 'ख'



ऋणदाता से असंतुष्ट सीपी नोटिस नहीं मिला है।

2. ऋणकर्ता द्वारा निकासी की सूचना या अन्यथा के माध्यम से हमें प्रदान की गई जानकारी और प्रमाणपत्रों के आधार पर, हम यह भी पुष्टि करते हैं कि सामान्य वरिष्ठ रुपया 'क' और वरिष्ठ ऋण बी समझौतों के अनुच्छेद में निकासी की पूर्व शर्तों को पूरा कर लिया गया है।

3. सुविधा करार की कण्डिका 2.2.1 के अनुसरण में, ऋणकर्ता की 14/09/2005 की दिनांकित आहरण की सूचना के संदर्भ में आहरण किया जा सकता है। यह भुगतान वरिष्ठ रुपया 'क' ऋणदाताओं और वरिष्ठ रुपया ऋण 'ख' ऋणदाताओं द्वारा 20 सितंबर, 2005 को किया जाएगा।

ऋणदाता अभिकर्ता के रूप में पावर फाइनेंस कॉर्पोरेशन लिमिटेड के लिए और उसकी ओर से।

द्वारा:

नाम : ए के अग्रवाल

पदनाम : जीएम (ईए- आईपीपी) और एनई (एलएपीपीएल)"

(3) ईंधन आपूर्ति करार पर 31-12-2015 को हस्ताक्षर किए गए थे।

(4) अंत में, 04-02-2006 को, अपीलार्थी (एलएपीएल) ने 20-09-2005 पर वित्तीय समापन को निम्नानुसार अधिसूचित किया :-

"एलएपीपीएल : एसईसीएल : 06:2801 4 फरवरी, 2006

श्री एम. के. थापर,

अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक,

साउथ ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड,

सीपत रोड,

बिलासपुर

छत्तीसगढ़



प्रिय महोदय,

विषय : वित्तीय समापन की अधिसूचना- के संबंध में।

संदर्भ: 31.12.2005 दिनांकित सीएसए

उपरोक्त के संदर्भ में, सीएसए के कण्डिका 2.4 के अनुपालन में, हम आपको सूचित करना चाहते हैं कि पहली 300 मेगावाट इकाई के लिए हमने 20.09.2005 पर वित्तीय समापन हासिल कर ली गई है।

आभार व्यक्त करते हुए,

आपका,

लैंको अमरकंटक पावर प्राइवेट लिमिटेड

के. राजा गोपाल के लिए

निदेशक और सीईओ"

29. इस प्रकार, तथ्यों के उपरोक्त विवरण से, यह काफी स्पष्ट है कि अपीलार्थी द्वारा 9 सितंबर, 2005 को करार की तिथि से बहुत पहले वित्तीय समापन प्राप्त किया गया था और विधिवत सूचित किया गया था और वित्त दस्तावेज 4 अगस्त, 2005 को पूरा किया गया था और प्रतिवादी को 4 फरवरी, 2006 को वित्तीय समापन की इस उपलब्धि के बारे में सूचित किया गया था और अधिक से अधिक, कण्डिका 2.4 उस बाहरी सीमा को निर्दिष्ट करता है जिसके भीतर क्रेता को वित्तीय समापन प्राप्त करना होगा जो अपीलार्थी ने करार के निष्पादन से बहुत पहले प्राप्त किया था। माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा अभिलिखित इस पहलू के निष्कर्ष में विद्वान जिला न्यायाधीश द्वारा केवल इस आधार पर हस्तक्षेप किया गया है कि दूसरे पक्ष द्वारा इस पर आपत्ति जताई गई है और चूंकि वित्तीय समापन हस्ताक्षर की तिथि से बहुत पहले प्राप्त किया गया था, इसलिए अपीलार्थी द्वारा इस प्रावधान का उल्लंघन किया गया है। एफ. एस. ए. "वित्तीय समापन" को सभी वित्तपोषण दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने और इसके तहत धन की प्रारंभिक उपलब्धता से पहले की सभी शर्तों को पूरा करने के रूप में परिभाषित करता है। यह स्पष्ट है कि वित्तीय समापन के लिए वास्तविक संवितरण की आवश्यकता नहीं है, लेकिन धन की उपलब्धता की आवश्यकता है। अपीलार्थी एस. ई. सी. एल. को पहले ही 09.09.2025 को सूचित कर चुका है कि ऋणदाता पहले से ही निधियों के लिए प्रतिबद्ध थे और जो कुछ बचा था वह एफ. एस. ए. पर हस्ताक्षर



करने के लिए था और तत्पश्चात चूंकि वित्तीय संस्थान 20.09.2005 को एफ. एस. ए. पर हस्ताक्षर करने से पहले ही निधियों का वितरण करने के लिए तैयार थे, इसलिए अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को 04.02.2006 को इसके बारे में सूचित किया।

30. इस प्रकार, माध्यस्थम् अधिकरण ने मामले पर एक प्रशंसनीय दृष्टिकोण अपनाया है कि यह उस बाहरी सीमा को निर्दिष्ट करता है जिसके भीतर अपीलार्थी वित्तीय समापन प्राप्त करेगा जिसे अपीलार्थी ने एफ. एस. ए. के निष्पादन से बहुत पहले प्राप्त किया है और उक्त निष्कर्ष विद्वान माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा एफ. एस. ए. के कण्डिका 2.4 की व्याख्या का परिणाम है।

31. एम. एस. के. प्रोजेक्ट्स इंडिया (जे. वी.) लिमिटेड (पूर्वोक्त) में सर्वोच्च न्यायालय यह अभिनिर्धारित किया गया कि यदि मध्यस्थ संविदा के निर्माण में कोई त्रुटि करता है, तो यह उसके अधिकारिता के भीतर एक त्रुटि है और निर्माण में ऐसी त्रुटि को अधिकारिता के बिना नहीं कहा जा सकता है, यह संविदा के बाहर एक त्रुटि है और केवल जब माध्यस्थम् अधिकरण संविदा से परे जाता है, तो वह अधिकारिता की त्रुटि करता है।

32. इसलिए, जिला न्यायाधीश ने माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा माध्यस्थम् पंचाट में किए गए संविदा के कण्डिकाओं की व्याख्या के स्थान पर अपने स्वयं के दृष्टिकोण को अपनी व्याख्या के साथ प्रतिस्थापित करने में स्पष्ट रूप से एक विधिक त्रुटि की है, बिना यह अभिनिर्धारित किए या यह पाए कि माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा किए गए संविदा की व्याख्या एक प्रशंसनीय दृष्टिकोण या संभावित दृष्टिकोण नहीं है और यह संविदा की शर्तों से परे है।

33. अगला आधार जिस पर विद्वान जिला न्यायाधीश ने निर्णय में हस्तक्षेप किया है, वह यह है कि अपीलार्थी द्वारा इस न्यायालय के समक्ष दायर रिट याचिका में प्रभावी तिथि को स्वीकार कर लिया गया है जिसमें माध्यस्थम् करार भी एक मुद्दा है। प्रभावी तिथि को उस तिथि के रूप में परिभाषित किया गया है जिस पर करार कण्डिका 2.2 की शर्तों के अनुसार प्रभावी हो जाता है, अर्थात् वह तिथि जिस पर सभी पूर्ववर्ती शर्तों को पूरा किया गया है या माफ कर दिया गया है। विद्वान माध्यस्थम् अधिकरण ने अपीलार्थी द्वारा रिट याचिका सं. 1514/2008 में की गई कथित स्वीकारोक्ति के लिए निर्णय की कण्डिका 32 में प्रभावी तिथि के मुद्दे पर विचार किया है और स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया है कि अपीलार्थी ने अनुरोध किया है कि कण्डिका 2.3 के तहत प्रभावी तिथि नहीं आई थी। संविदा में प्रभावी तिथि का वर्णन किया गया है, और क्या प्रभावी तिथि आ गई थी या नहीं, यह पूर्णतः से संविदा में निर्धारित प्रभावी तिथि से संबंधित प्रावधान की व्याख्या करने का विषय है और इसलिए ऐसी प्रभावी तिथि को 31 दिसंबर, 2005 के रूप में नहीं लिया जा सकता है और तत्काल प्रकरण में प्रभावी तिथि



नहीं पहुंची थी। अन्यथा भी, प्रत्यर्थी एस. ई. सी. एल. ने माध्यस्थम् कार्यवाही में अपने बचाव का बयान दायर किया है और अन्य बातों के साथ-साथ एस. ई. सी. एल. द्वारा निम्नानुसार कहा गया है :-

“10. करार की प्रभावी तिथि

... ..

कण्डिका 2.2 के तहत किसी संयुक्त सूचना पर हस्ताक्षर नहीं किए गए हैं और करार तिथि तक प्रभावी नहीं हुआ है।

.....

किसी भी स्थिति में, परिभाषा कण्डिका के अनुसार प्रभावी तिथि निर्धारित करने के लिए पूर्ववर्ती शर्तों को पूरा करने या उनकी छूट के पश्चात संयुक्त सूचना अनिवार्य थी। यहां तक कि 2.3 (ग) की छूट का अनुरोध भी दावाकर्ता द्वारा उन्हें समाप्ति नोटिस दिए जाने के पश्चात ही किया गया था।”

“11. कण्डिका 8- करार के तहत प्रत्यर्थी द्वारा पहली डिलीवरी की तिथि

.....

इसके अलावा, चूंकि करार की प्रभावी तिथि अभी तक पक्षों द्वारा एक संयुक्त सूचना के माध्यम से निर्धारित नहीं की गई है, जैसा कि 2.2 के तहत अनिवार्य है।

34. इस प्रकार, यह एस. ई. सी. एल. का अपना प्रकरण है कि कोई प्रभावी तिथि नहीं आई है क्योंकि कोई विफलता नहीं हो सकती थी अपीलार्थी की ओर से क्योंकि प्रभावी तिथि अभी निर्धारित नहीं की गई थी और चार महीने की खिड़की का संकेत तब तक नहीं दिया जा सका जब तक कि प्रभावी तिथि निर्धारित नहीं की जाती।

35. इस प्रकार, विद्वान जिला न्यायाधीश अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का मूल्यांकन करने के पश्चात विद्वान न्यायाधिकरण द्वारा प्राप्त तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने में अन्यायपूर्ण है, जो उपरोक्त निर्णय पूर्वोक्त में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को देखते हुए अनुमेय नहीं है।

36. विद्वान जिला न्यायाधीश ने इस आधार पर भी निर्णय में हस्तक्षेप किया है कि अपीलार्थी ने उक्त करार के कण्डिका 2.3 का उल्लंघन किया है। तीन शर्तें थीं जिन्हें पूरा किया जाना था। पहली शर्त वित्तीय समापन है और दूसरी शर्त पर्यावरण मंजूरी सहित आवश्यक मंजूरी, अनुमोदन आदि प्राप्त करना है। ये दोनों शर्तें हस्ताक्षर की तिथि (एफ. एस. ए. का निष्पादन) से बहुत पहले ही पूरी हो चुकी हैं और कोयला



नियंत्रण आदेश, 1945 के कण्डिका 14 के तहत अधिसूचना के लिए भारत सरकार से संयुक्त रूप से संपर्क करने की तीसरी शर्त को पूरा नहीं किया जा सका क्योंकि आवश्यक वस्तु अधिनियम को उक्त करार पर हस्ताक्षर करने के पश्चात संशोधित किया गया था और कोयले को अधिनियम के दायरे से हटा दिया गया था और किसी अधिसूचना की आवश्यकता नहीं थी, इस तरह, तीसरी शर्त को प्रतिवादी एस. ई. सी. एल. द्वारा माफ नहीं किया गया था, हालांकि अपीलकर्ता एल. ए. पी. एल. द्वारा अनुरोध किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप प्रभावी तिथि तक नहीं पहुंचा गया था और कोई चार महीने का समय नहीं था। विंडो को सूचित किया गया था लेकिन अंततः, 8-1-2008 पर, अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को 1-4-2008 से 31-7-2008 तक चार महीने के समय का संकेत दिया, और इस तरह, करार के कण्डिका 2.3 और 4.3 का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है। विद्वान माध्यस्थम् अधिकरण का निष्कर्ष अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर तथ्य का निष्कर्ष है और इसमें विद्वान जिला न्यायाधीश द्वारा अपने स्वयं के दृष्टिकोण को प्रतिस्थापित करके और अभिनिर्धारित करके हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता था कि कण्डिका 2.3 और 4.3 का उल्लंघन किया गया था जो माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 (2) के तहत आवेदन के दायरे से बाहर है। वास्तव में, विद्वान जिला न्यायाधीश ने इस तथ्य का पालन किए बिना और सराहना किए बिना खुद को गलत तरीके से निर्देशित करके पंचाट (अधिनिर्णय) के गुण-दोष में प्रवेश किया है कि माध्यस्थम् पंचाट को केवल मा.सु. अधिनियम की धारा 34 (2) के तहत गिने गए आधारों पर चुनौती दी जा सकती है और पंचाट (अधिनिर्णय) के गुण-दोष पर तभी आक्षेप किया जा सकता है जब यह मा.सु. अधिनियम की धारा 34 (2) (ख) (ii) के तहत भारत की सार्वजनिक नीति के साथ टकराव में हो और यह माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा प्राप्त तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने के लिए साक्ष्य की फिर से सराहना और पुनर्मूल्यांकन नहीं कर सकता है।

37. यह मुझे प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए अभिवाक् पर लाएगा कि अपील के ज्ञापन में कहा गया है कि अपील माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 37 (2) के तहत दायर की गई है, जो कि धारा 34 (2) के तहत आवेदन के रूप में विचारणीय नहीं है और अधिनियम की धारा 37 (1) (ख) के तहत अपील विचारणीय होगी। यह विधि का अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि किसी गलत प्रावधान का उल्लेख या विधि के किसी भी प्रावधान का उल्लेख न करना स्वयं ही किसी न्यायालय की अधिकारिता को छीनने के लिए पर्याप्त नहीं होगा यदि वह अन्यथा विधि में निहित है। अपनी शक्ति का प्रयोग करते समय, न्यायालय केवल इस बात पर विचार करेगा कि उसके पास ऐसी शक्ति का प्रयोग करने का स्रोत है या नहीं। (समर्थन के लिए जे. कुमारदासन नायर बनाम ई. आर. आई. सी. सोहन तथा पी. के. पलानीसामी बनाम एन. अरुमुघम व एक अन्य देखें।) इसलिए, धारा 34 (2) के तहत आवेदन देने के विरुद्ध की गई यह अपील धारा 37 (1) (ख) के तहत विचारणीय होगी और केवल अपीलार्थी द्वारा गलत प्रावधान का हवाला देते हुए धारा 37 (2) इस न्यायालय को अपील की शक्ति का प्रयोग



करने से वंचित नहीं करेगी जो इस न्यायालय के पास मा.सु. अधिनियम की धारा 37 (1) (ख) के तहत है। तदनुसार, अपील की स्थिरता के बारे में उठाई गई इस आपत्ति को एतद्वारा खारिज किया जाता है।

38. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री भादुड़ी के साथ निष्पक्ष होने के लिए, उन निर्णयों पर विचार करना उचित होगा जिनका उन्होंने अवलंब लिया है। एसोसिएट बिल्डर्स (पूर्वोक्त) का उल्लेख पहले ही ऊपर किया जा चुका है। कण्डिका 31 पर निर्भरता प्रत्यर्थी एस. ई. सी. एल. के लिए सहायक नहीं है, क्योंकि अभिलिखित निष्कर्ष और संविदात्मक कण्डिका की व्याख्या न तो विकृत है और न ही तर्कहीन है जैसा कि यहाँ ऊपर माना गया है। इसी तरह, तेल और प्राकृतिक गैस निगम लिमिटेड पूर्वोक्त पर उस निर्णय के पैरा 40 का उल्लेख करने पर दी गई निर्भरता भी प्रत्यर्थी (एस. ई. सी. एल.) के लिए सहायक नहीं है, क्योंकि विद्वान माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित निर्णय न तो विकृत है और न ही अतार्किक है जैसा कि ऊपर माना गया है। इसी तरह, सत्यनारायण कन्सट्रक्शन कंपनी (पूर्वोक्त) वर्तमान प्रकरण के तथ्यों से स्पष्ट रूप से भिन्न है, क्योंकि बहुमत से माध्यस्थम् का निर्णय न तो माध्यस्थम् अधिकरण के अधिकारिता से अधिक है और न ही न्यायाधिकरण ने संविदा की शर्तों को फिर से लिखा है जैसा कि इसमें ऊपर कहा गया है।

39. उपरोक्त विमर्श के परिणाम के रूप में, मा.सु. अधिनियम की धारा 34 (2) के तहत आवेदन देने वाले विद्वान जिला न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को अपास्त किया जाना चाहिए और तदनुसार खारिज कर दिया जाता है। माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा बहुमत द्वारा पारित 13-04-2012 दिनांकित अधिनिर्णय को एतद्वारा बहाल किया जाता है। प्रत्यर्थी को रु. 22,95,00,000/- की अधिनिर्णित राशि ब्याज के साथ और रु. 39,00,297/- इस प्रकार निर्दिष्ट ब्याज के साथ वापस करने तथा अपीलार्थी (एल. ए. पी. एल.) को तुरंत लागत का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है।

40. अपील को उपरोक्त सीमा तक स्वीकार किया जाता है। पक्षकार अपना वाद-व्यय स्वयं वहन करेंगे।

सही/-

(संजय के. अग्रवाल)
न्यायाधीश



छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

माध्यस्थम् अपील सं. 57/2013

मेसर्स लैंको अमरकंटक पावर लिमिटेड

बनाम

साउथ ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड

शीर्ष टिप्पण

माध्यस्थम् पंचाट में मध्यक्षेप केवल माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 (2) में सम्मिलित आधारों पर ही किया जा सकता है।

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Translated by Vivekananda Samaddar